परिस्थिति को लेकर शोक करना, सुखी-दुःखी होना मूर्खता से कम नहीं

संसार में मात्र दो चीज़ें हैं- सत् और असत्, शरीरी और शरीर इन दोनों में शरीरी तो अविनाशी है और शरीर विनाशी है। ये दोनों ही असोच्य हैं। अविनाशी का कभी विनाश नहीं होता, इसलिए उसके लिये शोक करना बनता ही नहीं और विनाशी का विनाश होता ही है, वह एक क्षण भी स्थायी रूप से नहीं रहता, इसलिए उसके लिए भी शोक करना नहीं बनता। तात्पर्य ये हुआ कि शोक करना न तो शरीर को लेकर बन सकता है और न शरीरी को लेकर ही बन सकता है। शोक के होने में तो केवल अविवेक(मूर्खता) ही कारण है।

मनुष्य के सामने जन्म-मरन, लाभ-हानि आदि के रूप में जो कुछ परिस्थिति आती है, वह प्रालब्ध का अर्थात् अपने किये हुए कर्मों का ही फल है। उस अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों को लेकर शोक करना, सुखी-दुःखी होना केवल मूर्खता ही है। कारण ये कि परिस्थिति चाहे अनुकूल हो, चाहे प्रतिकूल, उसका आरंभ और अंत होता है अर्थात् परिस्थिति पहले भी नहीं थी और अंत में भी नहीं रहेगी। जो परिस्थिति आदि में और अंत में नहीं होती, वह बीच में एक क्षण भी स्थायी नहीं होती। अगर स्थाई होती तो मिटती कैसे? और मिटती है तो स्थाई कैसे? ऐसी प्रतिक्षण मिटने वाली अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति को लेकर हर्ष-शोक करना, सुखी-दुःखी होना केवल मूर्खता है।

गीता में कहा है 'प्रसावादांश्च भाषने' एक तरफ तो तू पंडिताई(विद्वान) की बातें बघार रहा है और दूसरी तरफ शोक भी कर रहा है। अतः तू केवल बातें ही बनाता है। वास्तव में तू पंडित नहीं है, क्योंकि जो पंडित होते हैं, वे किसी के लिये भी कभी शोक नहीं करते।

कुल का नाश होने तक कुल-धर्म नष्ट हो जायेगा। धर्म के नष्ट होने से स्त्रियां दूषित हो जायेंगी, जिससे वर्णसंकट पैदा होगा। वह वर्णसंकट कुलघातियों को और उनके कुल को नरक में ले जाने वाला होगा। पिण्ड और पानी न मिलने से उनके पितरों का भी पतन हो जायेगा।

ऐसी तेरी पंडिताई की बातों से भी यही सिद्ध होता है कि शरीर नाश्वान् है और शरीरी अविनाशी है। अगर शरीरी स्वयं अविनाशी न होता, तो कुलघात और कुल के नरक में जाने का भय नहीं होता, पितरों का पतन होने की चिंता नहीं होती। अगर तूझे कुल की और पितरों की चिंता होती है, उनका पतन होने का भय होता है, तो इससे सिद्ध होता है कि शरीर नाश्वान् है और उसमें रहने वाला शरीरी नित्य है। अतः शरीरों के नाश को लेकर तेरा शोक करना अनुचित है।

'गतासुनगतासुंश्च' सबके पिण्ड-प्राण का वियोग अवश्यंभावी है। उनमें से किसी पिण्ड-प्राण का वियोग हो गया है, और किसी का होने वाला है। अतः उनके लिये शोक नहीं करना चाहिए। तुमने शोक किया है, यह तुम्हारी गलती है।

जो मर गये हैं, उनके लिये शोक करना तो महान गलती है। कारण ये कि मरे हुए प्राणियों के लिये शोक करने से उन प्राणियों को दुःख भोगना पड़ता है। जैसे मृतात्मा के लिये पिण्ड और जल दिया जाता है वह उसको परलोक में मिल जाता है, ऐसे ही मृतात्मा के लिये जो करते हैं और आँसू बहाते हैं, तो मृतात्मा को परवश होकर खाना-पीना पड़ता है। जो भी जी रहे हैं, उनके लिये भी शोक नहीं करना चाहिए, उनका तो पालन-पोषण करना चाहिए, प्रबंध करना चाहिए। उनकी क्या दशा होगी! उनका भरण-पोषण कैसे होगा! उनकी सहायता कौन करेगा! चिंता-शोक कभी नहीं करना चाहिए। क्योंकि चिंता-शोक करने से कोई लाभ नहीं। मेरे शरीर के अंग शिथिल हो रहे हैं, मुख सूख रहा है आदि विकारों के पैदा होने के मूल कारण हैं- शरीर के साथ एकता मानना। शरीर के साथ एकता मानने से ही शरीर का पालन-पोषण करने वालों के साथ अपनापन हो जाता है, और उस अपनेपन के कारण ही कुटुम्बियों के मरने की आशंका से अर्जुन के मन में चिंता-शोक हो रहे हैं, तथा चिंता-शोक से ही अर्जुन के शरीर में उपर्युक्त विकार प्रकट हो रहे हैं। तो गीता में ये अर्जुन और भगवान के सवांद में रोग और शोक के होने वाले कारण को स्पष्ट किया, तभी वे महान कर्त्तव्य के लिए तैयार हुए।

विदेही यानी देह से न्यारेपन का अभ्यास....

राजयोगिनी दादी हृदयमोहिनी जी

विदेही तब बन सकेंगे जब यह सब कर्मेन्द्रियां कन्ट्रोल में हों। इस देह की कर्मेन्द्रियां मेरे को क्यों खींचती हैं? क्योंकि कन्ट्रोलिंग पॉवर नहीं है तो फिर विदेही कैसे बनेंगे? देह से न्यारा माना देह से कोई अलग तो नहीं हो जायेंगे। लेकिन कोई भी देह की कर्मेन्द्रियां हमको अपने तरफ खींचे नहीं, यह प्रैक्टिस ज़रूर चाहिए। नहीं तो अन्त में जब हालतें बहुत खराब होंगी, उस समय कन्ट्रोलिंग पॉवर अगर नहीं होगी तो कभी भी पास विद ऑनर नहीं हो सकते। और बाबा तो कहते हैं कि अन्त में तो एक सेकण्ड का पेपर होगा- स्मृतिलब्धः, नष्टोमोहा। कर्मेन्द्रियों से सुनने, देखने, बोलने और सोचने का भी तो मोह होता है। उसे भी तो बॉडी-कॉन्शियस का ही एक हिस्सा कहेंगे। नष्टोमोहा माना सम्बन्धियों या वैभवों से, चीज़ों से ज़रा भी मोह नहीं। अपने शरीर की कोई भी कर्मेन्द्रियां अगर खींचती हैं माना मोह है, उससे प्यार है। तो नष्टोमोहा स्मृति स्वरूप कैसे होंगे? तो इसके लिए एक सहज अभ्यास है कि हम चाहे कितने भी बिज़ी रहते हैं लेकिन मैं आत्मा मालिक इन कर्मेन्द्रियों से यह काम करा रही हूँ। जैसे कोई डायरेक्टर, बॉस होता है - वह अपने ही कमरे में एक कुर्सी पर बैठा रहता है। परन्तु उसको यह नैचुरल याद रहता है कि मैं डायरेक्टर हूँ, यह कर्मचारी जो भी मेरे साथी हैं उनसे कराने वाला हूँ। मैं जिम्मेवार हूँ। यह तो याद रहता है ना! ऐसे यह भी याद रहे कि मैं आत्मा करावनहार हूँ और यह कर्मेन्द्रियां जो हैं मेरी कर्मचारी हैं यानी सारथी हैं। मददगार तो यह कर्मेन्द्रियां ही हैं। लेकिन मैं मालिक हूँ, कराने वाला हूँ। मालिक कहने से आत्मा अलग हो जाती है, शरीर अलग हो जाता है। यह प्रैक्टिस हम बीच-बीच में काम करते भी करें, यह नशा रखें कि मैं आत्मा करावनहार हूँ या मैं आत्मा मालिक हूँ। मालिकपन आयेगा तो न्यारापन ऑटोमेटिक होगा। कराने वाला मैं हूँ और यह करने वाली है तो डायरेक्शन से ज़रूर चलेंगे। यदि मालिक को मालिकपन ही याद नहीं होगा तो सर्वेन्ट मानेगा कैसे! कम्पनी के डायरेक्टर जो होते हैं वह अपने वर्कर्स को कितना बिज़ी रखने की कोशिश करते हैं, तो मैं भी मालिक हूँ इन कर्मेन्द्रियों को क्यों नहीं बिज़ी रखूँ!

दूसरा मैं मालिक हूँ तो विदेही यानी देह से न्यारे का अभ्यास नैचुरल होता जाता है। कर्म करते हुए यह अभ्यास करते रहो तो आपका लिंक जुटा रहेगा, और लिंक जुटा हुआ होने के कारण फिर जब आपको फुर्सत मिले उस समय आप विदेही बन जाओ। लेकिन विदेही का मतलब यह नहीं है कि चींटी ऊपर चढ़े तो पता ही नहीं पड़े। लेकिन जैसे कोई बहुत डीप विचार में होते हैं, कोई बात में बहुत रूचि होती है, सुनने की, देखने की तो उस समय बाहर कुछ भी होता रहे फिर भी हमारा अटेन्शन नहीं जाता है। समझो मैं खाना खा रही हूँ और मेरा कुछ विचार चल रहा है, जिसमें मेरा पूरा ध्यान उसी विचार में है तो खाना तो मैं मुख में ही डाल रही हूँ लेकिन अगर कोई मेरे से पूछे कि आज नमक ठीक है? तो आप जवाब नहीं दे सकेंगे क्योंकि आपका विचार जो है वह दूसरे तरफ इतना डीप था जो आपने खाया भी लेकिन खाते हुए भी आप न्यारे रहे।

ऐसे ही अगर हम देह में होते हुए अपने ही मनन चिंतन में हैं, मालिकपने के नशे में हैं तो मुझे यह कर्मेन्द्रियां क्यों आकर्षित करेंगी? नहीं कर सकती। यह अभ्यास बहुत सहज है क्योंकि इसमें काम को छोड़ने की बात नहीं है। काम करते हुए मालिकपन चाहिए। तो कर्म भी अच्छा होगा और विदेहीपन का अभ्यास भी पक्का होता जायेगा।

अमृतवेले मंथन ऐसे करो जो मक्खन भी मिले और छाछ भी

राजयोगिनी दादी जानकी जी

बाबा कहता है भारत को स्वर्ग बनाता हूँ और विश्व की सब आत्माओं से चुन करके उनको अपना साथी बनाता हूँ ताकि सारी विश्व स्वर्ग बन जाये। सिर्फ भारत थोड़े ही बनेगा, आधा कल्प नर्क कैसे बना है, वह तो जानते हैं। पाँच विकारों ने मायावी दुनिया में फंसा करके मजबूर बना दिया, मजदूर बिचारा मजबूर होकर काम करता है। पर अभी बाबा याद दिलाता है कि तुम मास्टर हो, मालिक हो ईश्वर को देख खुश हो जाओ, एक-एक प्रभु का प्यारा है सबसे न्यारा है तो एक जैसे नहीं हो सकते हैं, यह भेंट करना भूल है परन्तु हर एक न्यारा और बाबा का प्यारा है। पार्ट भी जो कल था वो आज नहीं है, न्यारा है। ड्रामा है ना!

चिंतन में ड्रामा और बाबा की नॉलेज ने घर कर लिया है इसलिए मंथन भी वही चलता है। बाबा कैसे इस तन में आता है, क्या करता है? मैंने तो देखा है, आप भी ऐसे अच्छी तरह से देखो, समझो, अनुभव करो तो कभी देह अभिमान का भूत आता नहीं है, सबको अच्छा लगता है। हमको तो गले लगाके अपना बनाया है। ऐसे प्यारे बाबा को कितना प्यार करना चाहिए। तो हमारी नज़र ऐसी हो जो मेरी नज़रों में होगा वही औरों को दिखाई पड़ता है। तो कर्म बड़े बलवान हैं, बाबा सर्वशक्तिवान है, याद रखो। अमृतवेले से मंथन ऐसे करो जो मक्खन भी मिले छाछ भी मिले। अगर मंथन करना नहीं आता है तो न रहता है मक्खन, न रहता है छाछ। ऐसा मंथन करने वाले सदा शीतल रह करके सर्वशक्तिवान से शक्ति लेकर बाप समान बनने की धुन में रहते हैं।

ज्ञान मार्ग में न कोई पॉजिशन चाहिए, न पैसा चाहिए, इससे जो फ्री रहते हैं उनका दिमाग ठण्डा रहता है, स्वभाव सरल रहता है, सहजयोगी हैं। न अधीन हैं, न किसी को अधीन बनाके रखा है। मैं मर जाऊं तो यह कहाँ से खायेगा? बाबा ने प्रैक्टिकल अपना मिसाल दिखाया, अव्यक्त हो करके भी ऐसी हमारी सम्भाल कर रहा है, वन्डरफुल है। किसी को यह फीलिंग नहीं है हमने साकार को नहीं देखा, ऐसी पालना अव्यक्त हो करके कर रहा है। फिर कहता है मैं नहीं करता हूँ, कराने में होशियार है। भगवान किसी का भाग्य बनाने में बहुत होशियार है। एक त्याग से भाग्य बनाया, दूसरा कर्म से भाग्य बन गया।

मूड ऑफ माना बाबा से मुख मोड़ना

गुस्से की आग खुद को जलाती, "जो बनता निर्मान वह सबका पाता मान" जो निर्मान नहीं वह जग में मान पा नहीं सकता। दोनों हाथ जोड़कर सिर झुकाना यह भी नम्रता है। दो हाथ बांधते माना आवाज़ नहीं करना, शांति से रहना है। सिर झुकाना नम्रता की निशानी है। हरेक की दुआ लेने का साधन है निर्मान बनो। जो निर्मान होते हैं उनके लिए दिल से सबकी दुआयें निकलती हैं। जब कोई दुआ देता तो सिर पर हाथ होता है, अगर आप विश्व की दुआयें लेने चाहते हो तो अपने को निर्मान बनाओ। फिर बाबा की भी अथाह दुआयें मिलेंगी। रुहानी दृष्टि से देखो, देह की दृष्टि से नहीं तो दुआ मिलेगी। मैं कहती हूँ - ओ मेरे चैतन्य देवतायें- अगर मेरी कोई भूल है तो "सॉरी"। अगर मैंने "सॉरी" की तो दुआयें मिल जायेंगी। जिसके सिर पर दुआ नहीं उसके सिर पर रावण है। एक-एक की दुआ लो तो बाबा की दुआयें रहेंगी, रावण भाग जायेगा।

मेरा सदैव हँसता हुआ मूड रहे- मैं बाबा को देखूं तो मुस्कुराऊं। श्रीकृष्ण को देखो मुस्कुराता है तो प्यारा लगता है। अगर जोश वाला होता तो क्या प्यारा लगता? मुस्कुराते हुए चेहरे वालों के चित्रों को हरेक गले से लगाते। परन्तु अगर मूडी होते, मूड ऑफ करते तो सीता का मुँह रावण की तरफ हो जाता, मूड ऑफ माना रावण। मूड ऑफ माना मूढ़मती। मूड ऑफ माना बाबा से मुख मोड़ना। यह सब चिन्ह हैं अपने को निर्बल बनाने के।

राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी

तुम कुमार नहीं, सजनियां हो। क्या मैं शिव साजन को पसन्द नहीं, या वह मुझे पसन्द नहीं जो दूसरे को पसन्द कराते! बाबा कहे जैसे हो वैसे हो मेरे हो। जब उसने मेरा कहा फिर हम दूसरे का क्यों बनें!

बाबा को कहते हैं परमपिता, परम अर्थात् ऊंचा परमधाम निवासी, तो हम परमधाम के निवासी, परमपिता के प्यारे बच्चे हैं इसलिए इस दुनिया से परे रहो। हरेक बात हमारी दुनिया से न्यारी है। हमें तो पवित्रता का झण्डा लहराना है, जिसको दुनिया असम्भव कहे, न माने उसे सम्भव कर दिखाना है। तुम कुमार नहीं, सजनियां हो। क्या मैं शिव साजन को पसन्द नहीं, या वह मुझे पसन्द नहीं जो दूसरे को पसन्द कराते। बाबा कहे जैसे हो वैसे हो मेरे हो। जब उसने मेरा कहा फिर हम दूसरे का क्यों बनें!

हम योग द्वारा वायब्रेशन, वायुमण्डल को परिवर्तन करने वाले हैं। बाबा से जितनी शक्ति लेना चाहो लो, रावण को मुट्ठी में बांध दो, अगर उसे फ्रीडम दी तो वह घर में घुस जायेगा। टेस्ट करो प्यारे बाबा को, उनके रसों को, दुनिया को टेस्ट करने की इच्छा नहीं रखो।

हम बाबा के योगी बच्चे हैं। योगी को देखना, योगी का व्यवहार सब सिम्पल और शीतल होता, ऐसे शीतल बनो तो अन्तर्मुखी बन जायेंगे। योगी की नींद नॉर्मल होती, शरीर को 5-6 घण्टे आराम देना ज़रूरी है, उससे ज़्यादा नींद सुस्ती की निशानी है।

अपने पुरुषार्थ से कभी हार्टफेल नहीं होना, नाउम्मीद भी नहीं होना। अगर हम सच्ची दिल से मेहनत कर रहे हैं तो मेरी सफलता की मार्क्स नोट हैं। अगर मेरे दिल की सच्ची भावनायें हैं तो सफलता ज़रूर होगी। बाबा की याद में चलते जाओ, पुरुषार्थ की नींव पक्की रखो तो सब बातें समाप्त हो जायेंगी। अपने को वानप्रस्थी समझो तो सब संस्कार निर्बल हो जायेंगे। बाबा से शक्ति लेकर बलवान बनो। ईश्वरीय मर्यादाओं की रक्षा करो- यही है ब्राह्मणों की राखी। जितना हम ईश्वरीय मर्यादाओं की रक्षा करते उतना रक्षक हमारी रक्षा करता है। लड़ना, झगड़ना, रोना, रूसना, चोरी करना, झूठ बोलना, ज़िद्द करना, अपनी मत चलाना... यह सब भोगियों की चाल है, योगियों की नहीं। कोई ज़िद्द करता है तो वह ब्राह्मण नहीं शूद्र है।